Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 18, Issue No. 5, August-2021, ISSN 2230-7540

खाण्डेराय रासो -पौरुश की ऋचाओं का उदग्र काव्य-ग्रंथ

जय प्रकाश शर्मा[1]* डॉ. विष्णु कुमार अग्रवाल[2]

[1] एम. ए. (हिन्दी ,) शोध छात्र

[2] आचार्य, शा. स्नानकोत्तरमहाविद्यालय, मुरैना (म.प्र)

सार - रासो के नाम से जानी जाने वाली हिंदी के प्रारंभिक रूप में लिखी गई कविता भाषा की प्रारंभिक अवस्था में है। उनमें से अधिकांश में बहादुर नायक शामिल हैं। लोकप्रिय हिंदी रासो कविता पृथ्वीराज रासो है। रासो ज्यादातर डिंगल भाषा में रचित महाकाव्य कविता से जुड़ा है , जबकि रास बरन परंपरा से जुड़ा है। इस लेख में हम हिंदी साहित्य के आदिकाल के अंतर्गत रासो काव्य के बारे में पढेंगे , इस टॉपिक में हम रासो का अर्थ , प्रमुख रासो काव्य ग्रन्थ और रासो काव्य की विशेषताएँ पढेंगे।

कीवर्ड - रासोए ऋचाओं , काव्य , ग्रंथ

---------------------------------X---------------------------------

परिचय

साहित्य के सौदागरों ने रीतिकाल ब्राण्ड की जो कविता हमें दी है , यही कहकर दी है कि इसमें शृंगार की रसिकता है , किसी ने यह कहकर हमें आश्वस्त किया है कि इसमें रसिकता का शृंगार है- शृंगार और रसिकता के अतिरिक्त इस काल में और कुछ भी नहीं लिखा गया है , किंतु रीतिकाल केवल शृंगार का त्यौहार ही नहीं है वह पौरूष का पर्व भी है , जैसे यज्ञ-पावक से होम-धूम निकलता है तो होम-सुरभित-ज्वाला भी निकलती है , वैसे ही रीति युग में जिस पिता के यहाँ चिंतामणि जैसा घोर शृंगारी पुत्र पैदा होता है उसी पिता के यहाँ शिवराज भूषण (भूषण) , छत्रप्रकाश (लाल) , सुजानचरित (सूदन) लिखने वाले भूषण , लाल और सूदन जैसी ज्वालायें भी पैदा होती हैं , मेरा समीक्ष्य ग्रंथ खाण्डेराय रासो (जदुनाथ भट्ट) रीतिकाल में रचित वीर काव्य है , रसिक - हृदय की धड़कनों के बीच वीर-भावों का यह प्रकम्पन निस्संदेह अभिनंदनीय है , जैसे रीति कविता गाते-गाते गरज उठी है , रस के बरसते हुए रिमझिम मौसम में जैसे बिजली कड़क उठी है , रीतिकाल को शृंगार काल कहने में " हेत्वाभास " है , वह जितना शृंगार है उससे कहीं अधिक वीर है , इस काल को शृंगार काल कहना ऐसा लगता है जैसे कोई डालडे के डिब्बे पर शुद्ध घी का लेबिल लगाकर बेच रहा हो , पेनिसिलीन के नाम पर पानी का इन्जेक्शन लगा रहा हो , मैं मानता हूँ रीतिकाल में कुछ तथाकथित कवि कविता सुनाते-सुनाते कामसूत्र सुनाने लग गये हैं , किंतु कवियों का एक वृहद समुदाय भी हैं , जो पंजाब से लेकर महाराष्ट्र तक , गुजरात के भुज और कच्छ से लेकर बंगाल तक , राजस्थान , मध्यभारत सभी प्रदेशों में वीर भाव के गीत (वैलेड्स) लिख रहा है , और पूरे रीतिकाल में इतने सारे वैलेड्स , इतने सारे वीर काव्य लिखे गये हैं यदि तौला जाये तो शृंगार काव्य तौल में कम बैठ सकता है , किंतु साहित्य के इतिहास लेखकों ने , आ शुल्क , द्विवेदी आदि ने जाने क्यों भूषण , मान , श्रीधर , गोरेलाल , पद्माकर आदि को रीतिमुक्त के खाते में अलग से खतिया दिया है , उन्हें वह महत्व नहीं दिया है जो शृंगारी कवियों को दिया जाता है , शायद शृंगार की बहुलता ही उन्हें दिख पायी थी , वीर-रसात्मक काव्यों का परिमाण उन्हें ज्ञात न था , वे यह भी शायद नहीं जान सके थे कि जिन्हें वे रीतिवद्ध , रीतिसिद्ध , रीतिमुक्त आदि नामों से पुकारते हैं , उन कवियों ने भी वीर काव्य को सम्पन्न बनाने में भरपूर योगदान दिया है , आज हम कह सकते हैं कि पुराने इतिहास लेखक जिस वीरकाव्य को रीतिमुक्त और रीतिकाल की अप्रधान काव्यधारा समझ रहे हैं , वह रीतिकाल की उतनी ही प्रधान और समृद्ध काव्य-धारा है , जितनी शृंगार की धारा है , वल्कि शृंगार की धारा से जो कहीं अधिक प्रशस्त और व्यापक है , देह की राजनीति से दूर जो देश की जागृति की साधना कर रही

है , जिसने वाणी को विलास से ऊपर उठाकर उसे शौर्य , शक्ति और सामथ्र्य की वाहिनी बनाने का स्तुत्य प्रयास किया है ,

डॉ टीकमसिंह जी तोमर ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से डी . फिल् . के लिए रीतिकालीन " हिन्दी वीर काव्य " विषय पर शोध-ग्रंथ लिखकर बडे परिश्रम से अनुसंधान कर अपने शोध ग्रंथ में 53 कवियों को खोज निकाला , जो रीतिकाल में वीर-रस की साधना कर रहे थे , यह बात दूसरी है कि शोधकर्ता ने 53 कवियों में से केवल 12 प्रतिनिधि कवियों के 16 महत्वपूर्ण ग्रंथों के आधार पर रीतिकालीन वीरकाव्य का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन प्रस्तुत कर अपना शोध-ग्रंथ पूरा किया है , रीतिकालीन हिन्दी-वीरकाव्य का समग्रतामूलक-अध्ययन तोमर सा 0 नहीं कर सके हैं , संभव है , उन्हें तब तक केवल 53 कवि ही उपलब्ध हो सके होंगे ,

रीतिकालीन वीर-काव्य पर सबसे महत्वपूर्ण कार्य सन 1987 में डॉ. भगवानदास तिवारी ने ' रीतिकालीन हिन्दी वीरकाव्य ' ग्रंथ लिखकर किया है , जिसे हिन्दी की लब्ध-प्रतिष्ठ संस्था ' हिन्दी साहित्य सम्मेलन ' प्रयाग ने प्रकाशित किया है , इस ग्रंथ में विद्वान लेखक ने रीतिकालीन हिन्दी वीरकाव्य के 211 कवियों और उनकी 232 रचनाओं का उल्लेख किया है , यह उल्लेखनीय है कि डॉ. भगवानदास तिवारी ने अपने ग्रंथ में डॉ. टीकमसिंह जी तोमर के ' हिन्दी वीरकाव्य ' में दिये गये 53 कवियों की अपेक्षा 158 (लगभग तिगुने) कवियों की अतिरिक्त जानकारी हमें दी है , अस्तु विषय की व्याप्ति और अनुसंधान की दृष्टि से ' रीतिकालीन हिन्दी वीरकाव्य ' निश्चित रूप से एक पुरोगामी रचना है ,

किंतु बड़ी निराशा हुई , जब मैंने डॉ तिवारी के ग्रंथ ' रीतिकालीन हिन्दी वीरकाव्य ' में ईसा की अठारहवी सदी में रचित प्रकाण्ड-वीरकाव्य ' खाण्डेराय रासो ' का नाम नहीं पाया , इसका कारण मैं डॉ तिवारी के लिए रासो की अनुपलब्धि को ही मानता हूँ , क्योंकि खाण्डेराय रासो की पुस्तक का पता ही 1990-91 ई में चल पाया था , यह ठीक है कि खाण्डेराय रासो की पुस्तक अनुपलब्ध थी , किंतु अनुपस्थित नहीं थी , कोटा राज्य के सारोला के ' गुलगले दफ्तर ' में इसका विवरण था , ग्वालियर के सरदार आनंदराव भाऊ साहब फालके द्वारा ' शिन्देशाही इतिहासाची साधने-भाग 2' की ' शिन्देदाराची भालेराई ' शीर्षक प्रस्तावना में खाण्डेराय रासो का संक्षिप्त परिचय तथा कुछ संदर्भित उद्धरण मौजूद थे , हो सकता है डॉ तिवारी की पैनी शोध-दृष्टि वहाँ तक पहुँच नहीं सकी थी ,

रीतिकाल में वीर काव्य लिखे गये यह तो समझ में आता है किंतु कोई रासो काव्य लिखा गया होगा - सहज स्वीकार नहीं होता , लगता है शृंगार की कविताओं में मुग्ध जनमानस रासो ग्रंथों को भूला नहीं था , रासो की कविताओं को जनता अभी भी प्यार से गाती थी , आल्हा तो आज भी सारे उत्तर भारत में उतने ही आदर , उतनी ही श्रद्धा से गाया जाता है जितनी श्रद्धा से लोग रामायन पढ़ते हैं , अतः रीतिकाल में भी कुछ ऐसे कवि रहे होंगे जो जनता की प्रिय और परिचित शैली में लिखना चाहते थे ताकि उनकी कविता को जनादेश मिल सके , लगता है जनादेश के कारण ही खाण्डेराय रासो के कवियो की एक लम्बी लाईन शृंगार के उस घोर युग में खाण्डेराय रासो के छंदों को निश्चल होकर लिखने में लगी थी ,

" रासो " शब्द कानों से टकराते ही ऐसा लगता है कि यह कोई वीरगाथा-कालीन रचना है यह सत्य है कि वीरगाथाकाल एक ऐसा काल था जब लोग कविता के मंडप के नीचे बैठ कर जो भी लिखते थे वह रासो की कविता ही लिखते थे , किंतु निवेदन है कोई ग्रंथ रासो के नामकरण से वीरगाथा काल का संदर्भ प्राप्त नहीं कर लेता है , खाण्डेराय रासो इस तथ्य का प्रमाण है यह ग्रंथ वीरगाथाकाल में न लिखा जाकर , उस काल में गया है जिसे हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल के नाम से अभिहित किया गया है

खाण्डेराय रासो रीतिकाल में रचित शुभ स्थान विजयपुर जिला श्योपुर में भैया खेमराम काइथ द्वारा मिती वैशाख वदी 8, मंगलवार , संवत् 1860, (17 अप्रेल 1750 ई.) को लिपिकृत , अठारहवी सदी के विरल योद्धा खण्डेराय को लेकर लिखा गया , शुक्रवार , फरवरी 1707 ई. को औरंगजेब के देहावसान से लेकर अप्रेल 15, 1739 ई. को बूदी के राव राजा बुधसिंह हाडा की मृत्यु पर्यन्त प्रकाश डालने वाला 615 पृष्ठों का वृहद ऐतिहासिक-काव्य-ग्रंथ है , निस्संदेह क्षेत्रिय इतिहास के एक कालखण्ड विशेष के लिए यह काव्यग्रंथ एक महान उपलब्धि है , क्षेत्र विशेष के तत्कालीन इतिहास के लिए यह काव्य प्राथमिक महत्व का एक ऐसा महत्वपूर्ण आधार ग्रंथ है जिससे उस राज्य तथा क्षेत्र विशेष की राजनैतिक ही नहीं , सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितयों की भी स्पष्ट जानकारियाँ मिलती हैं ,

कालिदास ने कहीं लिखा है कि- " रत्नं न मनिविष्यते मृग्यते हितत् " रत्नखोजता नहीं है , वल्कि खोजा जाता है , रासो के कोहिनूरों को भी कोयले की कब्रों में जेसे दबा दिया गया था उनके मिलने की कहानी कुछ ऐसी है जैसे

किसी ने कोयले को खोजते- खोजते कोहिनूर की खोज कर डाली है महान पुरातत्ववेता डॉ वुलर यदि सन् 1885 में संस्कृत के ग्रंथों की खोज करते करते कश्मीर न पहुचे होते तो पृथ्वीराज रासो को आज कौन जानता था ? कर्नल टॉड भी उसका अंग्रेजी अनुवाद कहाँ से कर पाते ? कश्मीर में डॉ. वुलर को " पृथ्वीराज विजय " की एक प्राचीन कृति जयानक कवि द्वारा लिखी हुई मिली , जिसपर द्वितीय राजतरंगिणी के कर्ता जोनराज की टीका भी थी , अभी तक " पृथ्वीराज रासो " जैसा ग्रंथ किसी ने लिखा है , कोई जानता तक न था , जब राजपूताने के इतिहास लेखक कर्नल टॉड ने पृथ्वीराज रासो का पढा तो वह झूम उठा उसने मुग्ध होकर रासो के लगभग 30000 पदों का अंग्रेजी में अनुवाद कर डाला , जो बडा ही मूल्यवान है , " परमाल रासो की भी यही कहानी है " परमाल (परमर्दिदेव) कालिंजर का राजा था जो वि.स. 1222 में गद्दी पर बैठा था , परमाल को लेकर जगनिक ने परमाल रासो लिखा , जिसे हम आज आल्हाखंड के नाम से जानते हैं , आल्हा का लिखित मूल ग्रंथ तो अभी तक अप्राप्त है किंतु आल्हा की कविता लोगों को कितनी प्रिय थी , इसका प्रमाण यह है कि पीढी दर पीढी वह वह लोककण्ठ में सुरक्षित बनी रही है , सं. 1922 वि. में फरूखाबाद के तत्कालीन कलेक्टर चाल्र्स इलियट ने तीन-चार प्रसिद्ध आल्हा गायकों को बुलवाया और स्मृति के आधार पर उसे लिपिवद्ध करवाया , यद्यपि उस लिपि की भाषा कनौजी थी आल्हा के विवाह-खण्ड की कथा के भोजपुरी रूप को जार्ज ग्रियर्सन ने अगस्त 1885 ई. में ' इण्डियन - ऐंटीक्वैरी ' में प्रकाशित कराया और जो आल्हा आज हमारे पास है वह इसी प्रयास का परिणाम है ,

जो कहानी पृथ्वीराज रासो के खोज की है वैसी ही कहानी खाण्डेराय रासो के खोज की है , जैसे पृथ्वीराज रासो के खोजकर्ता वुलर संस्कृत ग्रंथो की खोज करते करते कश्मीर पहुचे थे , वैसे ही सीतामऊ के राजकुमार स्वर्गीय डॉ. रघुवीर सिंह अपनी पुस्तक " मालवा में युगान्तर " की सामग्री एकत्र करते हुए ग्वालियर आये थे ,

ग्वालियर निवासी इतिहास प्रेमी स्वर्गीय सरदार आनन्दराव भाऊ साहब फालके सिंधिया घराने के इतिहास पर अधिकाधिक प्रकाश डालने हेतु यथासाध्य अप्रकाशित ऐतिहासिक सामग्री एकत्र करने को सदैव तत्पर रहते थे , इसी उद्देश्य से उन्होंने कोटा राज्य में सारोला के तत्कालीन इनामदार श्रीमन्त सरदार पुरूषोत्तमराव गुलगुले से सम्पर्क साध कर उनके अधीन " गुलगुले दफ्तर " को प्रकाशित करने के लिये प्राप्त कर उस सारे दफ्तर का देवनागरी लिपि में लिप्यान्तरण करवा कर उसको उन्होंने " शिन्देशाही इतिहासाची साधने " नामक ग्रंथावली में प्रकाशित करने का आयोजन किया था किंतु दुर्भाग्यवशात् केवल तीन भाग ही उनके जीवनकाल में प्रकाशित हो सके थे ,

ग्वालियर राज्य के इतिहास पर ईसा की अठारहवी सदी के पूर्वार्द्ध पर प्रकाश डाल सकने वाले विवेच्य " खाण्डेराय रासो " नामक वृहद काव्यग्रंथ की हस्तलिखित प्रतिलिपि भी उन्होंने ढूँढ निकाली थी जिसके कुछ अंश " शिन्देशाही इतिहासाची साधने के भाग दो की " शिन्देदाराची भालेराई " शीर्षक प्रस्तावना में उसका संक्षिप्त परिचय तथा कुछ संदर्भित उदाहरण भी प्रस्तुत किये थे ,

सरदार आनन्दराव भाऊ साहब फालके को पता चला कि " खाण्डेराय रासो " की हस्तलिखित प्रति नरवर के प्रसिद्ध कछवाहा शासकों के वंशज हरसी ठिकाने के इस्तमुसरदार रामसिंह कछवाहा के संग्रह में उपलब्ध है सरदार फालके ने हरसी से उसे प्राप्त किया , सरदार फालके इस हस्तलिखित " खाण्डेराय रासो को संपादित कर स्वयं ही उसे प्रकाशित करना चाहते थे , परन्तु दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं कर सके , वैसा करने के पूर्व ही उनका देहान्त हो गया और खाण्डेराय रासो का प्रकाशन रुका रह गया ,

जब डॉ. रघुवीर सिंह ग्वालियर आये तो उन्होंने सरदार श्री आनन्दराव भाऊ साहब फालके से " खाण्डेराव रासो की हस्तलिखित प्रति प्राप्त कर अपने लिये उसकी एक हस्तलिखित प्रति करवा ली , जो श्री ' रघुवीर ' लाइब्रेरी में ले जाकर रख दी गयी ,

" खाण्डेराय रासो " की एक हस्तलिखित प्रति सीतामऊ में श्री रघुवीर लाइब्रेरी में रखी है - जब इसका पता खाण्डेराय की चैदहवी पीढी के वंशज रावसाहव- द्वय श्री रामसिंह वशिष्ठ एवं श्री संतोष सिंह वशिष्ठ को लगा , तो रावसाहव सीतामऊ पहुँचे , हस्तलिखित खाण्डेराय रासो की प्रति की फोटोकॉपी करवाकर शिवपुरी ले आये , आज मेरे पास जो प्रति है वह रावसाहव वाली प्रति की फोटोकॉपी है ,

कभी-कभी सोचता हूँ कि कितना दुर्भाग्य रहा होता , यदि सीतामऊ के राजकुमार डॉ रघुवीर सिंह अपने ग्रंथ " मालवा में युगान्तर " की सामग्री एकत्र करने के उददेश्य से ग्वालियर नहीं आये होते और शिवपुरी निवासी राव-साहव-द्वयश्री रामसिंह वशिष्ठ जी एवं श्री संतोष सिंह वशिष्ठ जी की साहित्यिक-उत्सुकता एवं अपने पूर्वजों के प्रति प्रेम इतना उद्दामनहीं रहा होता तो खण्डेराय रासो

जैसे महान काव्य ग्रंथ से आज हिंदी साहित्य वंचित ही रहा होता ,

कितने अनुताप की बात है कि ग्वालियर राज्य के इतिहास पर ईसा की 18 वी सदी के पूर्वार्द्ध पर प्रकाश डाल सकने वाले , साहित्य को अर्थ और संस्कृति को सामथ्र्य देने वाले खाण्डेराय रासो के इस वृहद काव्य ग्रंथ को इतनी सुदीर्घ सदियों तक दबाकर-छिपाकर रखने का क्रूर षडयंत्रक्या हमारे किसी नैतिक-भौंथरेपन का प्रमाण नहीं है ?

क्या साहित्य की परख करने वाले बौद्धिक-समाज के बौद्धिक संस्कारों औेर साहित्य-संवेदनों को लकवा मार गया था ? और यदि सबकुछ ठीक-ठाक चल रहा था , तो हमारे 250 वर्षों के वयोवृद्ध-ज्ञानवृद्ध-समाज ने खाण्डेराय रासो जैसे ग्रंथ को साहित्य-जगत के सम्मुख लाने की बौद्धिक-उत्सुकता क्यों नहीं दिखायी ?

लगता है , रीतिकाल घोर शृंगार का युग था , शृंगार का बोलबाला होने से शृंगार के दोहे , कवित्त , सवैये ही लोगों को याद रहे होंगे , कुछ इने-गिने लोग रहे होंगे , किंतु उनकी सजगता रासो ग्रंथो के प्रति नहीं रही होगी , अतः खाण्डेराय रासो जैसी महत्वपूर्ण निधि को सहेजकर रखने की बौद्धिक उत्सुकता जनता में नहीं रह गयी होगी , धीरे- धीरे खाण्डेराय रासो जैसा महान ग्रंथ स्मृति से गायब हो गया होगा , यह भी हो सकता है कि राव नवलसिंह के पश्चात् उनके वंशज उतने शक्तिशाली औेर वंश- गत- गौरव के प्रति उतने संवेदनशील न रहे होंगे कि अपने पूर्वजों पर प्रणीत काव्य की सुरक्षा और संरक्षा कर पाते ,

किंतु जिसका रक्षक ऊपर वाला होता है , जिसकी सुरक्षा स्वयं भगवान करते हैं उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है ? अपने प्रणयन काल से लेकर लगभग 250 वर्षों के लंबे अन्तराल तक अपनी घोर उपेक्षा और अवमानना के बावजूद , सदियों तक अश्रुति और अपरिचय के गर्त में पड़ा रह कर भी खाण्डेराय रासो अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित की भाँति सुरक्षित बना रहा , साहित्य जगत में अनुपस्थित रहकर भी वह बार बार साहित्य प्रेमियों के बंद दरवाजों को खटखटाकर कभी सरदार फालके , कभी डॉ. रघुवीर सिंह , कभी रावसाहव-द्वय रामसिंह एवं संतोष सिंह जैसे मनीषियों के मन-मस्तिष्क में अपनी पूरी अहमियत और ऊर्जा के साथ उपस्थितिदर्ज कराता रहा और अपने जीवित होने का ऐलान करता रहा , लोग गायब करके भी इस ग्रंथ को गायब नहीं कर पाये ,

बहरहाल , खाण्डेराय रासो के इतने दिनों तक गुमनामी की एकांत-गुफा में साधन-निरत रहने का लाभ यह हुआ है , कि ग्रंथ की प्रमाणिकता पर कोई उँगली नहीं उठा सकता है , जैसा कि आल्हाखण्ड और पृथ्वीराज रासो पर उठायी जाती रही है , जो ग्रंथ आज उपलब्ध है वह उसी रूप में है जिस रूप में लिखा गया था ,

खाण्डेराय रासों की उपलब्धि से यह भी संभावना की जाती है कि हो सकता है कि ऐसे ही कुछ और भी रासो ग्रंथ तत्कालीन संस्कृति और ऐतिहासिक चरित्रों को केंद्र बना कर लिखे गये होंगे , उनकी भी खोज की जाना चाहिये , संभव है उन ग्रंथों में देश को उसका खोया हुआ इतिहास और इतिहास को उसका खोया हुआ देश मिल जाये ,

“ खाण्डेराय रासो “ जैसा कि नाम से स्पष्ट है , इसमें खाण्डेराय के रासो (युद्धों) का वर्णन है , खाण्डेराय रासो के स्पष्टतः दो भाग हैं - प्रथम भाग है “ कवि संग्रह “ (पृष्ठ 1 से 124 तक) और दूसरा भाग है “ जंगजस ” (पृष्ठ 124 से 615 तक) , “ कवि संग्रह “ में लगभग 51 कवियों की रचना का संग्रह है , कवि संग्रह में कवियों की एक लम्बी कतार है जो अपनी लेखनी में प्रशस्ति की स्याही भरकर अपनी युग के अखण्ड योद्धा खाण्डेराय का जस वर्णन करने में लगी हुई है , ऐसा लगता है खाण्डेराय जब युद्ध जीतकर आते होंगे , विजयोत्सव मनाया जाता होगा , राजदरबार में कवि इकट्ठे होते होंगे , विजयी -वीर की अभ्यर्थना में कविता- वीरों की कविताएँ छलक पडती होंगी , बाद में उन्हें संग्रहीत करके ग्रंथ का रूप दे दिया होगा , “ जंगजस ” जैसा कि नाम से ही ध्वनित होता है , यह ग्रंथ जंगों का जस - खाण्डेराय के युद्धों की कीर्ति लिखने के लिए लिखा गया है , नवल सिंह के आग्रह पर कवि जदुनाथ ने इसे लिखा है , अप्रेल 6, 1730 ई. को कुशवल-पांचोला के युद्ध में खाण्डेराय मारे गये , लगता है उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके कनिष्ठ पुत्र नवल सिंह ने अपने कवि मित्र जदुनाथ भाट को यह आदेश दिया कि वह उनके पिताश्री के युद्धों और विजयों पर केन्द्रित सारी कविताओं को एक ग्रंथ के रूप में लिखे। नवल सिंह का हुक्म पाकर खाण्डेराय की जंगों का वर्णन करने वाला ग्रंथ ’ जंगजस ’ जदुनाथ ने लिखा -

“ हुकुम पाइ नवलेस कौ , करि हरि चरन प्रनाम ,

जंगनि कौ बरनन कर्यौ , ग्रंथ जंगजस नाम ,” पृ. 229/430

राव नवल सिंह अतीव काव्य प्रेमी थे , कवियों और गुणियों से इतना प्यार करते थे जितना चंद्रमा चकोर से और सूर्य कमल से करता है-

" जैसैं चन्द्र चकोर सैं रवि अरू कमलै प्यारू ,

तैसैं नवल कुवांर जू कवि गुनि जन आधार " पृ. 382

इसलिये राव नवल सिंह के दरवार में देश-विदेश के तमाम विप्र और चारण-भाट आते ही रहते थे और प्रशस्ति गाते रहते थे , जदुनाथ एक ऐसा ही भाट था , जो भदावर से आया था -

" आवत देश विदेश के विप्र भाट कवि जाल

रावप्रवल नवलेस कौ वरनत सुजस विसाल "

" देश भदावर तै तहॉ आयो कवि जदुनाथ

जा पर सब क्रपा करत महि के सब नरनाथ "

जदुनाथ भाट पृथ्वीराज रासो के योद्धा-कवि चंदवरदायी का वंशधर था-

" वरदायी कवि चंद्र कुल प्रगट्यो सुमति निधान

तातैं कवि जदुनाथ कौ करत नृपति सव मान "

करौली के राजा गोपाल सिंह जादौन के यहाँ भी जदुनाथ का विशेष सम्मान था , करौली नरेश ने करौली रियासत का एक गाँव देकर जदुनाथ का सम्मान किया था-

जादौं भूप गुपाल नैं कर्यौं सरस सनमान

गाँव दयौ कीनी क्रपा सुनि निज सुजस निदान "

कहते हैं , रियासत के इसी गाँव मे रहकर जदुनाथ ने " वृत-विलास " नामक ग्रन्थ भी लिखा है , जिसमें उसने अपने वंश का परिचय देते हुए लिखा है कि चंद ने 1,05,000 छंदों के परिमाण के पृथ्वीराज रासों की रचना की थी -

" एक लाख रासो कियौ सहस पंच परिमान

पृथीराज नृप को सुजसु जाहर सकल जहान "

राजा गोपाल सिंह से भी अधिक कवि जदुनाथ राव नवल सिंह का कृपा-पात्र था , नवल सिंह ने वक्शीश में जदुनाथ को एक घोडा भी दिया था-

" नृप तैं सरस क्रपा करी राव प्रवल नवलेस

मोती हय वकसीस दै राखत हेत हमेस "

' मोती हय ' यहाँ व्यंजक है , लगता है उस घोडे का नाम ' मोती ' था , यह अन्य घोड़ों से हटकर कोई स्पेशल टाईप का घोड़ा था ,

नवलराव ने सुकवि जदुनाथ से राव-राजा खाण्डेराय को केन्द्र बनाकर संवत क्रम से उनका किस-किस के साथ कब-कब युद्ध हुआ , एक विस्तृत ग्रंथ लिखने का अनुरोध किया -

" कहीं सुकवि जदुनाथ सौं करि कैं कृपा अपार

षंडनु रैया राह कौ करौ ग्रंथ विस्तार "

" जीतीं जितनी जंग ते वरनौ सवै विचारि

जा संवत मैं ज्यौं भई ज्यौं सत्रुनि सौं रारि ,"

राव नवल सिंह के हुक्म का पालन करते हुए जदुनाथ ने जंगजस काव्य-ग्रंथ लिखा -

" हुकुम पाई नवलेस कौ रचे छंद अभिराम

कीन्यौ षंडुन राउ कौ ग्रंथ जंगजसु नाम। "

उक्त विवेचन से स्पष्ट है , जदुनाथ ने छंदों की रचना अपनी इच्छा से नहीं , राव नवलसिंह के आदेश से की है , कविता के विचार से नहीं , खाण्डेराय के युद्धों की कीर्ति के प्रचार के लिए जदुनाथ ने अपने छंद बनाये हैं , साफ है कि जंगजस की कविता सीधे-सीधे खाण्डेराय के जंगो की यश-प्रवाही कविता है , और जदुनाथ यशगीत लिखने वाला एक चारण , खाण्डेराय रासो के कवि खाण्डेराय की कीर्ति को संचारित करने वाले " चारण " पहले हैं और कवि बाद में हैं , किन्तु याद रखें ये कीर्ति गाने वाले चारण है किसी का कीर्तन करने वाले चाटुकार नहीं , कोई इन्हें चमचागिरी करने वाला नहीं समझे , यदि ये एक हाथ में " कलम " रखते थे तो दूसरे हाथ में " कटार " भी रखते थे , इन्हें कोई किसी ऐरे-गेरे-नत्थू-खैरे का यश गाने वाला " भोपू " नहीं समझे , जिसकी वीरता के ये दीवाने हो जाते थे , जिसके पौरूष के पुजारी बन जाते थे , उसी की पूजा में इनके गीतों की आरती सजती थी , जिन वीर पुरूषों का ये हृदय से सम्मान करते थे , उनके प्रति इनके हृदय की अतल गहराईयों से कविता फूट पड़ती थी , " कवि संग्रह " के सारे कवि इसी कोटि के कवि हैं , उनकी कविता की गंगा वीर-वाँकुरों का यश गाने के लिए वही है , अपने देश की आन-

www.ignited.in

बान-शान के लिए रक्त चढ़ाने वाले शहीदों की यश गाथा लिखने के लिए चली है , शहीदों की शहादत को लिखने वाली इस लेखनी की जो सुषमा है , जो सौन्दर्य है , वह भारतमाता के गौरव की विभूति है , अत्यंत गर्व का विषय है कि शृंगारकाल के रस-गीतों के बीच खाण्डेराय रासो के यश-गीतों का यह लेखन अत्यंत स्पृहणीय है ,

यह सत्य है कि खाण्डेराय रासो के कवि युद्धों के चितेरे थे , चारण थे- कीर्ति के प्रचारक थे , कविता के विचारक नहीं , कविता के विचार से इन्होंने कविता नहीं लिखी है , आश्रयदाता की कीर्ति के प्रचार के लिए इन्होने छंद बनाये हैं किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे कवि नहीं थे , उनकी कवितायें उनके कवि होने का केवल प्रमाण ही नहीं , पुख्ता सबूत हैं , और एक सामान्य सी बात है जिसे अबोध से अबोध भी समझ सकता है कि कविता का दूसरा नाम कला भी होता है , जब हम किसी को कवि कहते हैं तो प्रकारान्तर से हम यही कहते हैं कि उसके पास कविता की कला है , खाण्डेराय रासो के कवि , चाहे वे कवि संग्रह के कवि हों , चाहे जंगजस का जदुनाथ भाट हो , यदि कविता उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ी है तो कला साष्टांग होकर उनके चरणों में पड़ी है , खाण्डेराय रासो के इन कलाधरों को कौन नमन करना नहीं चाहेगा ? यशःगीत लिखने वाले ये चारण कोरे भाट ही नहीं थे , कला-कालिंदी के घाटों पर बैठकर भी इन्होंने खूब डुबकियाँ लगाई हैं ,

मानता हूँ खाण्डेराय रासो के सारे कवि लोहू और लोहा के गायक थे , लोहू को वहते हुए और लोहा को बजते हुए अपने जीवन में इन्होंने निरन्तर देखा था , लोहू से रंगी और लोहे से सजी इस कविता में कला की चाँदनी भी कम नहीं बिखरी है , खाण्डेराय रासो के कवि केवल युद्धों की गुत्थियों में ही नहीं उलझे रहे हैं , काव्यशास्त्र की गुत्थियों को भी इनकी लेखनी सुलझाती रही है , पिंगल के तो ये जैसे पारंगत पंडित ही लगते हैं , छंद के पहले छंद का लक्षण देकर बाद में छंद लिखे हैं इससे लगता है कि ये छंद शास्त्र के निषण्ण निष्णांत थे यद्यपि खाण्डेराय रासो में " अस्त्र और शस्त्रों " की झनझनाहट ही सुनाई पड़ती है किंतु " शास्त्र " की यह झिलमिलाहट भी बड़ी मनोहारी है , ऐसा लगता है जैसे वे लोगों को यह बताना चाहते थे कि कोई उनको चारण या भाट ही न समझे , कविता का पाण्डित्य भी उनके पास है , केवल कविता लिखना ही वे नहीं जानते , कविता का शास्त्र भी जानते हैं , वे भाव-भावित ही नहीं हैं , वुद्धि-वोधित भी हैं , हृदय को साथ लेकर चलते हैं , लेकिन वुद्धि के कंधे पर भी वे अपना हाथ रखकर चलते हैं , यदि खाण्डेराय अपने दौनों हाथों से तलवार चलाने में सिद्वहस्थ था , तो खाण्डेराय के यश उद्गाताओं को भी दौनों हाथों से तलवार चलाना वख़ूबी आता है ,

खाण्डेराय रासो में देखने में तो सीधी सादी यशः प्रवाही उक्तियाँ हैं , किंतु ये सीधी सादी दिखने वाली उक्तियाँ , कहीं-कहीं इतने टेढ़े ढंग से कही गयी हैं कि वक्रोक्ति बन गयी हैं , कहना न होगा कि नवल सिंह और खाण्डेराय जैसे वंकिम वीरों की वीरता के गायकों के गीतों को वंकिम तो होना ही था , खाण्डेराय एक वंकिम वीर है , उनकी वीरता वंकिम है , उन पर लिखी कविता वंकिम है , कविता का एक-एक शब्द वंकिम है , एक-एक वाक्य वंकिम है , एक-एक भाव वंकिम है , एक-एक कवि वंकिम है , जब हम खाण्डेराय रासो की कविताओं का पढ़ रहे होते हैं ऐसा लगता है किसी दुर्गम पर्वत की वंकित राहों से होकर उपर चढ़ रहे होते हैं , ध्वनि की प्रतिध्वनि को सुनकर तो सुनने वाला कविता के संगीत में जैसे डूब जाता है , ओज गुण तो जैसे पद-पद पर छलकता हुआ नजर आता है , रसों में वीर , रोद्र , भयानक और वीभत्स की भरमार है , शिव का डौंरू बज रहा है , मशान नाच रहा है , योगनियाँ नाच रही हैं , काली रकत्र से पत्र भर रही है , कहीं जम्मुखी झौटांओं को झकोरकर झुकी है , कहीं फैंफरी नखों से माँस को तोड़-तोड़कर खा रही है , किलकारी मारती हुई काली मुण्डमाला गोह रही है , कहीं कटकर भूमि पर पड़ते हुए मुण्डों की पड़पड़ है , कहीं फटते हुए कपालों की फरफर है ,

यत्र तत्र शान्त रस के दर्शन करके बड़ी शान्ति मिलती है , शृंगार रस का रासो मे सर्वथा अभाव है और वीर रस का इतना प्रभाव है कि पूरी कविता वीरता के देवता की अर्चना बन गई है , इस कविता में हम अपने उस भारत को देख सकते हैं जो पराजय के क्षणों में भी अपनी अपराजेयता में दुनिया के सामने खड़ा है , नवल सिंह और खाण्डेराय जैसे वीर पुरूषों के रूप में भारत का उदग्र पौरूष गरज रहा है कुल मिलाकर काव्य कला की दृष्टि से भी खाण्डेराय रासो एक कमनीय रचना है।

जब तक यह संसार है , संसार में मनुष्य है , मनुष्य में पौरुष है और पौरुष में अपने स्वत्व , अपने सम्मान और अपने गौरव के लिए मर-मिटने की भावना है , वीरवर खाण्डेराय और राव नवल जैसे राष्ट्र पुरुषों के पौरुष की ऋचाएँ हमारा मार्गदर्शन करती रहेंगी।

अभी यह ग्रंथ अप्रकाशित है , हस्तलिखित प्रति के रूप में ही हमारे पास है , यह अत्यंत आवश्यक है कि इस विशद

महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य-ग्रंथ का शीघ्रातिशीघ्र प्रकाशन हो सके , ताकि यह साहित्य और इतिहास के सर्वसाधारण पाठकों तथा गहन अध्येताओं का सुलभ हो सके ,

संदर्भग्रंथ

1. हिन्दी वीरकाव्य (डाॅ0 उदय नारायण तिवारी)

2. हिन्दी वीरकाव्य (डाॅ0 टीकम सिंह तोमर)

3. रीतिकालीन हिन्दी वीरकाव्य (डाॅ0 भगवानदास तिवारी)

4. रास और रासान्वयी काव्य (डाॅ0 दशरथ शर्मा)

5. हिन्दी नाटक उद्भव विकास (दशरथ ओझा)

6. हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास (आचार्य चतुरशेन शास्त्री)

लेख -

1. महाकवि चंद के वंशधर (प्रो 0 रमाकान्त त्रिपाठी) चाँद पत्रिका (मारवाड़ी अंक विशेषांक)

2. खाण्डेराव रासो: एक वृहत काव्यग्रंथ (डाॅ0 रघुवीर सिंह) रघुवीर निवास , सीतामऊ (मालवा) पिन- 458990, जुलाई 19,1988

3. खाण्डेराव रासो - एक खोये हुए इतिहास की उपलब्धि (डाॅ0 सुभाष शर्मा)

4. सचिव शांति विकास एवं सांस्कृतिक एकता परिषद शांति , विकास एवं सांस्कृतिक एकता परिषद के 14 वें शोध सम्मेलन में प्रस्तुत)

5. शिन्देशाही इतिहासाची साधने भाग- 2 (स्वर्गीय सरदार आनंदराव भाऊ साहब फालके)

Corresponding Author

जय प्रकाश शर्मा*

एम. ए. (हिन्दी)ं शोध छात्र